न्यारापन १९

१

सर्व प्रकार के हद के स्वभाव संस्कार से अतीत अर्थात् न्यारा। हद है बन्धन, बेहद है निर्बन्धन।

२

सभी प्रवृति में रहते प्रवृति के बन्धन से न्यारे और सदा बाप के प्यारे हो? किसी भी प्रवृति के बन्धन में बंधे हुए तो नहीं हो? लोकलाज के बन्धन में, सम्बन्ध में बंधे हुए को बन्धनयुक्त आत्मा कहेंगे। तो कोई भी बन्धन न हो। मन का भी बन्धन नहीं। मन में भी यह संकल्प न आये कि हमारा कोई लौकिक सम्बन्ध है। लौकिक सम्बन्ध में रहते अलौकिक सम्बन्ध में स्मृति रहे। निमित्त लौकिक सम्बन्ध लेकिन स्मृति में अलौकिक और पारलौकिक सम्बन्ध रहे। सदा कमल आसन पर विराजमान रहो। कभी भी पानी वा कीचड़

की बूँद स्पर्श न करे। कितनी भी आत्माओं के सम्पर्क में आते सदा न्यारे और प्यारे रहो। सेवा के अर्थ सम्पर्क है। देह का सम्बन्ध नहीं है, सेवा का सम्बन्ध है। प्रवृत्ति में सम्बन्ध के कारण नहीं रहे हो, सेवा के कारण रहे हो। घर नहीं सेवास्थान है। सेवा-स्थान समझने से सदा सेवा की स्मृति रहेगी।

३

अपने को परिवर्तन में लाने के लिए क्या करना पड़ेगा? हरेक चीज को लौकिक से अलौकिकता में परिवर्तन करना है। जिससे लोगों को मालूम हो कि यह कोई विशेष अलौकिक आत्मा है। लौकिक में रहते हुए भी हम, लोगों से न्यारे हैं। अपने को आत्मिक रूप में न्यारा समझना है। कर्तव्य से न्यारा होना तो सहज है, उससे दुनिया को प्यारे नहीं लगेंगे, दुनिया को प्यारे तब लगेंगे जब शरीर से न्यारी आत्मा रूप में कार्य करेंगे। तो सिर्फ दुनिया की बातों से ही न्यारा नहीं बनना है, पहले तो अपने शरीर से न्यारा बनना है। जब शरीर से न्यारे होंगे तब प्यारे होंगे। अपने मन के प्रिय, प्रभु प्रिय और लोक प्रिय भी बनेंगे। अभी लोगों को क्यों नहीं प्रिय लगते हैं? क्योंकि अपने शरीर से न्यारे नहीं हुए हो। सिर्फ देह के

सम्बन्धियों से न्यारे होने की कोशिश करते हो तो वह उल्हने देते। खुद को क्या चेन्ज किया है? पहले देह के भान से न्यारे नहीं हुए हो तब तक उल्हना मिलता हे। पहले देह से न्यारे होंगे तो उल्हने नहीं मिलेंगे। और ही लोकप्रिय बन जायेंगे। कई अपने को देख बाहर की बात को देख लेते हैं और बातों को पहले चेन्ज कर लेते हैं, अपने को पीछे चेन्ज करते हैं। इसलिए प्रभाव नहीं पड़ता है। प्रभाव ड़ालने के लिए पहले अपने को परिवर्तन में लाओ। अपनी दृष्टि, वृत्ति, स्मृति को, सम्पत्ति को, समय को परिवर्तन में लाओ तब दुनिया को प्रिय लेगेंगे।

४

जो लोग करते हैं वह किया तो क्या किया! आप तो अल्लाह-लोग हो, न्यारे लोग हो। अभी वाणी के बाम्बस फेंकते हो लेकिन यह अभी बेबी बाम्बस हैं। अभी प्राप्ति के अनुभूति के बाम्बस चलाओ। जो सीधा जीवन परिवर्तन कर दें। दिमाग तक तीर लगाये हैं, दिल का तीर नहीं लगाया है। आगे क्या करना है, वह प्लैन तो देना पड़ेगा ना! अभी मुख का आवाज़ निकलता है कि अच्छा कार्य कर रहे हैं। लेकिन दिल से आवाज़ निकले कि ‘‘यही एक मार्ग

है''। मुख का सौदा करने वाले बहुत होते हैं, दिल से सौदा करने वाले कोटों में कोई होते हैं। लेकिन आप सभी दिलवाला के बच्चे हो, दिल से सौदा कराने वाले हो। तो अब क्या करेंगे? ऐसा शक्तिशाली सेवा का चक्र चलाओ जो सर्व आत्मायें अपने पूर्वजो को पहचान प्राप्ति के अधिकार को प्राप्त कर लें। कुछ सुना, अच्छा सुना, इसके बदले, कुछ मिला ऐसे अनुभूति करें। समझा? सुनाते अच्छा हैं, नहीं बनाते अच्छा हैं। कम खर्चा, कम शक्ति, कम समय इसी विधि से सिद्धि स्वरूप बनो।

५

सारा दिन बाप द्वारा जो शुद्ध प्रवृत्ति मिली हुई है, बुद्धि की प्रवृत्ति है शुद्ध संकल्प करना, वाणी की प्रवृत्ति है जो बाप द्वारा सुना वह सुनाना, कर्म की प्रवृत्ति है कर्मयोगी बन हर कर्म करना, कमल समान न्यारा और प्यारा बन रहना, हर कर्म द्वारा बाप के श्रेष्ठ कार्यों को प्रत्यक्ष करना हर कर्म चरित्र रूप से करना। चतुराई नहीं लेकिन चरित्र, वह भी दिव्य चरित्र। सम्पर्क में प्रवृत्ति है निमित्त स्वयं सम्पर्क में आते सदा सर्व का जो बाप है, उससे सम्पर्क कराना। तो ऐसी पवित्र प्रवृत्ति में बिजी रहने से व्यथ्र संकल्पों से निवृत्ति होगी। वह

लोग कहते हैं प्रवृत्ति से निवृत्ति। बाप कहते हैं पवित्र प्रवृत्ति से ही निवृत्ति हो। गृहस्थी अलग है – उनको गृहस्थी नहीं कहेंगे। पवित्र प्रवृत्ति को ट्रस्टी कहेंगे न कि गृहस्थी। तो समझा निवृत्ति का आधार पवित्र प्रवृत्ति है।

६

कर्मयोगी का अर्थ ही है–मैं अशरीरी आत्मा शरीर के बंधन से न्यारी हूँ, कर्म करने को लिए कर्म में आती हूँ और कर्म समाप्त कर कर्म-सम्बन्ध से न्यारीहो जाती हूँ, सम्बन्ध में रहते हैं, बंधन में नहीं रहते। तो यह क्या हुआ? कर्म के लिए ''आना'' और फिर न्यारा हो जाना। कर्म के बन्धन-वश कर्म में नहीं आते हो लेकिन कर्मेन्द्रियों को अधीन कर अधिकार से कर्म करने के लिए कर्मयोगी बनते हो। इन्द्रियों के कर्म के वशीभूत नहीं हो। कोई भी किसी के वश हो जाता तो वश हुई आत्मा मजबूर हो जाती है और मालिक बनने वाली आत्मा कभी किससे मजबूर नहीं होती, अपने स्वमान में मजबूत होती है। कई बच्चे अभी भी कभी-कभी किसी-न-किसी कर्मेन्द्रिय के वश हो जाते हैं, फिर कहते हैं–आज आंख ने धोखा दे दिया, आज मुख ने धोखा दे दिया, दृष्टि ने धोखा दे दिया। पर-

वश होना अर्थात् धोखा खाना और धोखे की निशानी है दु:ख की अनुभूति होना। और धोखा खाना चाहते नहीं हैं लेकिन न चाहते हुए भी कर लेते हैं, इसको ही कहा जाता है वशीभूत होना। दुनिया वाले कहते हैं–चक्कर में आ गये...चाहते भी नहीं थे लेकिन पता नहीं कैसे चक्कर में आ गये। आप स्वदर्शन चक्रधारी आत्मा किसी धोखे के चक्कर में नहीं आ सकती क्योंकि स्वदर्शन चक्र अनेक चक्कर से छुड़ाने वाला है। न सिर्फ अपने को, लेकिन औरों को भी छुड़ाने के निमित्त बनते हैं। अनेक प्रकार के दु:ख के चक्करों से बचने के लिए सोचते हैं–इस सृष्टि-चक्र से निकल जायें...। लेकिन सृष्टि चक्र के अन्दर पार्ट बजाते हुए अनेक दु:ख के चक्करों से मुक्त हो जीवनमुक्त स्थिति को प्राप्त कर सकते हैं–यह कोई नहीं जानता है। आप चैलेन्ज करते हो कि हम आपको जीवन में मुक्ति डबल दिला सकते हैं–जीवन भी हो और मुक्ति भी हो ऐसी चैलेन्ज की है ना? नशे से कहते हो कि जीवनमुक्ति आपका और हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है, तो स्वदर्शन चक्रधारी अर्थात् दु:ख के चक्करों से मुक्त रहने वाले और मुक्त करने वाले। वशीभूत होने वाले नहीं लेकिन अधिकारी बन, मालिक बन सर्व कर्मेन्द्रियों से

कर्म कराने वाले। धोखा खाने वाले नहीं लेकिन औरों को भी धोखे से छुड़ाने वाले। यही अभ्यास करते हो ना–कर्म में आना और फिर न्यारा हो जाना, तो याद का अभ्यास क्या रहा? आना और जाना। और पढ़ाई अर्थात् ज्ञान का सार क्या है? कर्मातीत बन घर जाना है और फिर राज्य करने का पार्ट बजाने अपने राज्य में आना है। यही ज्ञान का सार है ना। तो ''जाना'' और ''आना''–यही ज्ञान और योग है, इसी अभ्यास में दिन-रात लगे हुए हो। बुद्धि में घर जाने की और फिर राज्य में आने की खुशी है। जैसे मधुबन अपने घर में आते हो तो कितनी खुशी रहती है। जब से टिकेट बुक कराते हो तब से जाना है, जाना है–यह बुद्धि में याद रहता है ना! तो जब मधुबन घर की खुशी है तो आत्मा के घर जाने की भी खुशी है। लेकिन खुशी से कौन जायेगा? जितना सदा यह ''आने'' और ''जाने'' का अभ्यास होगा। जब चाहो तब अशरीरी स्थिति में स्थित हो जाओ और जब चाहो तब कर्मातीत बन जाओ–यह अभ्यास बहुत पक्का चाहिए। ऐसे न हो कि आप अशरीरी बनने चाहो और शरीर का बंधन, कर्म का बंधन, व्यक्तियों का बंधन, वैभवों का बंधन, स्वभाव-संस्कारों का बंधन अपनी तरफ आकर्षित करे। कोई

भी बंधन अशरीरी बनने नहीं देगा। जैसे कोई टाइट ड्रेस पहनते हैं तो समय पर सेकण्ड में उतारने चाहें तो उतार नहीं सकेंगे, खिंचावट होती है क्योंकि शरीर से चिपटा हुआ है। ऐसे कोई भी बंधन का खिंचाव अपनी तरफ खीचेगा। बंधन आत्मा को टाइट कर देता है। इसलिए बापदादा सदैव यह पाठ पढ़ाते हैं –निर्लिप्त अर्थात् न्यारे और अति प्यारे। यह बहुतकाल का अभ्यास चाहिए।